आत्म-निवेदन

प्रत्नकीर्ति का चतुर्थ अङ्क प्रकाशित करने में अत्यधिक विलम्ब हुआ। विलम्ब का एक बहुत बड़ा कारण इस पत्रिका के अनुकूल और इसके उद्देश्यों को पूरा करने में सक्षम शोधपत्रों की अनुपलब्धि रही है। प्रायः हमारे विद्वान् लेखक ऐसे लेख हमारे पास भेज रहे हैं जो ज्ञात तथा चर्चित संस्कृत-साहित्य एवं उसके इतिहास से सम्बन्धित होते हैं, जबकि 'प्रत्नकीर्ति' में अज्ञात तथा अचर्चित संस्कृत, हिन्दी-साहित्य एवं उनके इतिहास से सम्बन्धित लेख ही प्रकाशित किए जा सकते हैं। इससे एक बात जो निश्चित-रूपेण कही जा सकती है; वह है - अज्ञात, अचर्चित तथा अनालोचित संस्कृत-साहित्य एवं उसके इतिहास के प्रति वर्तमान संस्कृत-पीढी की उदासीनता।

इस अंक के प्रकाशन के साथ ही हम अपने पाठकों को दुःख के साथ सूचित कर रहे हैं कि इस पत्रिका के परामर्शदातृ-समिति के अन्यतम सदस्य, हमारे संस्थान के विशिष्ट परामर्शदाता और हिन्दी-साहित्य के मूर्धन्य आचार्य डॉ. ओम प्रकाश त्रिवेदी जी का १४ नवम्बर २०१४ को गोलोकवास हो गया। आपके निधन से हमारी जो क्षति हुई है उसे हम शब्दों में नहीं आँक सकते।

डॉ. ओम प्रकाश त्रिवेदी जी का जन्म १४ सितम्बर १९३९ ईस्वी को जबलपुर (मध्य प्रदेश) में हुआ था। आपकी प्रारम्भिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा जबलपुर में ही हुई। हिन्दी में स्नातकोत्तर उत्तीर्ण कर १९६२ ई. में आप दो-ढाई वर्षों तक तहसीलदार पद पर कार्य करते रहे किन्तु १९६४ ई. में इस सेवा से मुक्त हो अध्ययन-अध्यापन की प्रत्यक्ष परम्परा में आए और संस्कृत-महाविद्यालय, खाण्डवा में हिन्दी प्राध्यापक नियुक्त हुए। यह आपकी पहली नियुक्ति थी। यहाँ एक ही सप्ताह रहने के बाद आप बालाघाट के एक कॉलेज में नियुक्त हुए जो सागर-विश्वविद्यालय से सम्बद्ध था। बालाघाट में आपने लगभग पाँच वर्षों तक अध्यापन किया। यहीं रहकर आपने डॉ. नारायण दास साहू के निर्देशन में जबलपुर विश्वविद्यालय से 'हिन्दी-साहित्य में दूत-परम्परा' शीर्षक पर १९६६-६७ ई. में पीएच. डी. शोध उपाधि प्राप्त की।

बालाघाट के बाद सीहौर, सीहौर से फिर नरसिंहपुर, जबलपुर आदि कई नगरों के महाविद्यालयों में अध्यापन कार्य करते और हिन्दी-साहित्य की सेवा करते हुए आप 'मानकुँअर बाई कॉलेज' जबलपुर से २००२ ई. में सेवा-निवृत्त हुए। सेवानिवृत्ति के बाद भी आप जबलपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग से जुड़े रहे और हिन्दी-साहित्य की सेवा में अपना योगदान देते रहे।

मान-सम्मान और पुरस्कारों के घटाटोप आडम्बर से दूर डॉ. त्रिवेदी ऐकान्तिक सारस्वत-साधना में विश्वास रखने वाले इस युग के स्मरणीय आचार्य रहे। हिन्दी-साहित्य की अनुसन्धान-धारा को श्रेष्ठतम दिशा और दशा देने सम्बन्धी उनकी चिन्ता और उनके श्रम को हमने बहुत नज़दीक़ से देखा है।

आचार्य त्रिवेदी हमारे संस्थान के 'संस्कृत-साहित्य को मुस्लिमों का योगदान' शीर्षक परियोजना में प्रकाशित होने वाले ग्रन्थों के विलक्षण क्रेता थे। विलक्षण इसलिए कि समूचे वर्ष में कम से कम पाँच-सात फोन तो उनके इसलिए हमारे पास आते कि इस शृंखला में कोई अगली पुस्तक प्रकाशित हुई या नहीं। मुझे याद है कि जब हमने उन्हें 'अकबर और संस्कृत' के प्रकाशन की सूचना दी तो किस तरह इसे ख़रीदने के लिए आप बेचैन हो उठे। चूँकि पुस्तक प्रेस में थी और दो महीने तक प्रेस में ही रह गई, इन तीन महीनों में तक़रीबन् २० बार आपका फोन ज़रूर आया होगा।....

इसी तरह के कई फोन के बावज़ूद आपको 'जहांगीर और संस्कृत' की प्रकाशित प्रति न भेजने का दु:ख हमें हमेशा सालता रहेगा। दर-अस्ल यह पुस्तक अभी तक प्रकाशित न हो पाई थी।.....

आपके निधन से यह संस्थान आज अपने को असहाय सा महसूस कर रहा है, किन्तु आपके सन्देश और मार्गदर्शन हमें हमारे लक्ष्यों को प्राप्त करने में पाथेय का काम करेंगे। संस्थान की ओर से आपको हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

सम्पादक.